

राजनीतिक भ्रष्टाचार का यथार्थ प्रस्तुत किया गया है। यह संस्मरण उपन्यास के रूप में मैत्रेयी जी के अपने जीवन दिल्ली के 'हिन्दी एकादमी' में कार्यरत अनुभव है। जहाँ सम्मान प्राप्त करने की होड़ लगी है। कथा की मुख्य पात्र कुन्तल है जो 'भारतीय साहित्य संस्था' की उपसंयोजिका है।

“मेरे मन में बार-बार ये विचार उठता है कि तुम्हारे साथ मुझे समथर जाना चाहिए। यह आकांक्षा जल्दी ही पूरी होगी मगर किस दिन पूरी होगी यह निश्चित नहीं है। 'समथर' यह शब्द या कस्बा भर नहीं, बहुत कुछ है समझो तो।”

भारतीय संस्कृति में महिलाओं को समाज में ऊँचा दर्जा दिया है परन्तु अनेक कारणों से भारतीय स्त्रियों की स्थिति निरन्तर कमजोर होती गई और उन्हें पुरुषों द्वारा असीमित मर्यादा और अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया गया है। स्त्री परम्परा मूल्यों को नकारते हुए अपने व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा चाहती है। इतिहास, सभ्यता और धर्मशास्त्रों ने स्त्री को बधिया बना दिया है। उसकी सारी सृजनशीलता दमन कर दिया है।

स्त्री चेतना से तात्पर्य स्त्री की अस्मिता या विभिन्न स्तरों पर प्राप्त अनुभवों के स्वरूप से है जिसमें नारी आधुनिक समाज में अपना अधिकार प्राप्त कर सके। नारी चेतना वह विचारधारा है जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता की मांग करता है। मैत्रेयी जी ने अपने उपन्यासों में नारी चेतना को प्रमुखता से मुखर किया है। उनके उपन्यासों के अधिकतर स्त्री पात्र, ग्रामीण एवं अनपढ़ हैं लेकिन अपने अधिकारों के प्रति सजग हैं।

“स्त्री समानता का संघर्ष सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक इन तीनों ही स्तरों पर एक ही साथ चलना चाहिए।”

संदर्भ सूची

- (1) 'वागर्थ'- सितम्बर 2017, पृष्ठ-39
- (2) 'कस्तूरी कुडल बसे'- मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ-29
- (3) 'हिन्दी उपन्यास का इतिहास'- डा० गोपाल राय, पृष्ठ- 387
- (4) आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का चित्रण-मो0 अजहर देरी वाला, पृष्ठ-99
- (5) अल्मा कबतरी-मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ-347
- (6) अगन पाखी-मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ-96
- (7) विजन-मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ-120
- (8) फरिश्ते निकलें-मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ-87
- (9) नमस्ते समथर-मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ-12
- (10) स्त्री वादी साहित्य विमर्श-जगदीश्वर चतुर्वेदी, पृष्ठ-204

प्रो. वशिष्ठ द्विवेदी : एक रचनात्मक व्यक्तित्व

- सीमांकन यादव

शोध-छात्र हिन्दी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय 6387482349

प्रो. वशिष्ठ अनूप जहाँ कवि हृदय की उच्चता को प्राप्त करते हैं वहीं दूसरी ओर अपने पाठक वर्ग ; उसमें भी विशेषतः छात्रों के बीच तमाम साहित्यिक-वैचारिक गुणधर्मों को बहुत ही सरल एवं सहज ढंग से उपस्थित करने का सार्थक प्रयास करते हैं। आप अपने गीत-ग़ज़लों के माध्यम से तो सभी का मन मोह ही लेते हैं साथ ही पाठक को घर-गाँव परिवार, मेले, रिश्तों आदि की आत्मीयता में तत्काल पहुंचा देते हैं या यूँ कहें कि मन और मस्तिष्क में पुनरावृत्ति करा देते हैं। ठीक वैसे ही अपने छात्रों के लिए इतिहास, भाषा, साहित्य, विमर्शादि पर अत्यंत उपयोगी तर्कों एवं तथ्यों के साथ सहजाभिव्यक्ति देते नज़र आते हैं; 'हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास' (2012) इसी तरह का एक पुस्तकाकार प्रयास था जो विद्यार्थियों द्वारा ख़ूब पढ़ा गया। इस इतिहास-ग्रंथ की खासियत यह है कि इसमें जनवादी कविता, गीत, हिन्दी ग़ज़ल आदि के स्वरूप एवं विकास पर बख़ूबी चर्चा की गयी है साथ ही स्त्री, दलित, जनजातीय विमर्श और इनके साहित्य पर भी एक बहस छेड़ी गयी है। यानि आदिकाल से लेकर आधुनिक काल से होते हुए उत्तर-आधुनिकता एवं भूमण्डलीकरण के साहित्य पर भी चर्चा को स्थान देता हुआ दिखता है यह 'हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास'। ठीक इसी तरह 'समकालीन कविता के प्रतिमान', 'आधुनिक हिन्दी कविता की वैचारिक पृष्ठभूमि और सृजन', 'कविता के जनवादी स्वर', 'जगदीश गुप्त का काव्य संसार', 'समकालीन हिन्दी ग़ज़ल', 'हिन्दी ग़ज़ल का स्वरूप और महत्वपूर्ण हस्ताक्षर', 'हिन्दी गीत का विकास और प्रमुख गीतकार', 'गीत का आकाश', 'हिन्दी भाषा, साहित्य एवं पत्रकारिता का इतिहास', 'व्यावहारिक एवं प्रयोजनमूलक हिन्दी तथा साहित्यशास्त्र' आदि प्रो० वशिष्ठ अनूप द्वारा रचित महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं जिनके द्वारा हिन्दी साहित्य को समग्रता में जाना एवं समझा जा सकता है। 'हिन्दी-भाषा और साहित्य का इतिहास' पुस्तक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर तैयार की गयी थी जिसका प्रकाशन सन् 2006 ई० में हुआ। यह पुस्तक किसी भी पाठ्यक्रम के विद्यार्थी को हिन्दी भाषा और साहित्य में समझ विकसित करने हेतु ज्ञानप्रद है। इस पुस्तक में हिन्दी ग़ज़ल के संदर्भ में प्रो० वशिष्ठ अनूप कहते हैं- "ग़ज़ल हिन्दी की एक अपेक्षाकृत नयी विधा है किन्तु देखते ही देखते यह हिन्दी काव्य की एक अत्यंत सशक्त एवं महत्वपूर्ण विधा का स्वरूप ग्रहण करने की स्थिति में पहुंच गयी है। विगत तीन दशकों में ग़ज़ल को जो लोकप्रियता प्राप्त हुई है, वह हिन्दी साहित्य के लिए एक सुखद एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि है। ठीक से देखा और समझा जाए तो इस बीच ग़ज़ल लिखने वालों की संख्या बहुत बढ़ी है किन्तु हिन्दी ग़ज़ल के आलोचकों की संख्या कम है जो वर्तमान समय में लिखी-रची जा रही ग़ज़ल में समाहित गुण-दोषों, संभावित सुधारों को कहने का बीड़ा उठाये। ऐसे में प्रो० अनूप स्वयं तो एक सशक्त ग़ज़लकार हैं ही साथ ही एक सशक्त आलोचक भी हैं, जो कहते हैं- 'हिन्दी ग़ज़ल को अपने आलोचक स्वयं पैदा करने होंगे।' प्रो० अनूप का एक बहुचर्चित शेर देखें- तुलसी के, जायसी के, रसखान के वारिस हैं, कविता में हम कबीर के ऐलान के वारिस हैं। एक अच्छी रचना समाज की जीवंत तस्वीर तो प्रस्तुत करती है, उसकी आलोचना भी करती है और उसे बदलने के लिए भी प्रेरित करती है। यह ज़रूरी नहीं कि परिवर्तन की यह प्रेरणा बहुत मुखर हो। रचना में विचार कभी-कभी प्रच्छन्न भी होते हैं जैसे शरीर में रक्त। साहित्य के संदर्भ में प्रो० अनूप कहते हैं- "साहित्य में मानव-मन की सहजवृत्तियों और संवेदनाओं की

अभिव्यक्ति होती है साथ ही उसमें समाज की धड़कने सुनायी पड़ती है। उसमें एक तरफ सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति होती है तो दूसरी तरफ जनाकांक्षाओं और सपनों को भी वाणी मिलती है। इसीलिए साहित्य समाज का दर्पण होने के साथ-साथ समाज का दीपक भी होता है।" ध्यातव्य है कि साहित्य में एक व्यवस्था और अनुशासन स्थापित करने के लिए तथा एकरूपता लाने के लिए व्याकरण और काव्यशास्त्र का निर्माण किया गया। आचार्यों एवं विद्वानों ने कुछ ऐसे नियम बनाये जिनसे काव्यादि में एकरूपता तो आये ही, नयी रचनाशीलता को दिशा-निर्देश भी मिले, उनका पथ-प्रदर्शन भी हो। साथ ही साहित्य के कुछ मानदण्ड भी निर्धारित किए गये जिन पर रचे जा रहे साहित्य को जांचा-परखा जा सके। काव्य का स्वरूप, हेतु, प्रयोजन तथा रस, छंद, अलंकार आदि इसी साहित्यानुशासन के अंग हैं जिन्हें काव्यांग कहा जाता है। इन तमाम विषयों पर प्रो० अनूप की मानीखेज टिप्पणियां स्मरणीय हैं। किसी भी साहित्य को समृद्ध बनाने के लिए उसकी भाषा का समृद्ध-सरस होना अत्यावश्यक है। भाषा मनुष्य की एक अमूल्य उपलब्धि है। इस संबंध में प्रो० अनूप कहते हैं- "मानव-समाज अपने विचारों का आदान-प्रदान और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से ही करता है। गतिशील मानव-समाज और सभ्यता के साथ भाषा का भी विकास और परिमार्जन होता रहता है। इसी प्रकार साहित्य-सृजन भी निरंतर चलती रहती है। विभिन्न कालों में सृजित साहित्य की क्रमबद्ध और व्यवस्थित प्रस्तुति को साहित्य का इतिहास कहते हैं।" प्रो० वशिष्ठ अनूप कहते हैं कि अध्ययन का कोई विकल्प नहीं होता है। आपके चिन्तन एवं सर्जना के केंद्र में सदैव विद्यार्थी-पाठक रहते हैं इसलिए कृतित्व में कहीं न कहीं एक कोमल हृदयी व्यक्तित्व झांकता रहता है जो जटिल से जटिल विषय को बड़ी सहजता से ग्राह्य बना देता है। प्रो० वशिष्ठ अनूप जब अपनी इतिहास-पुस्तकों में काल-विभाजन करते हुए अपनी टिप्पणी देते हैं तो जो एक महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करते हैं वह है- आम आदमी की दशा। यह चाहे भक्तिकाल हो या रीतिकाल या आधुनिक काल। इस संदर्भ में वे कहते हैं- 'इन कवियों के काव्यों में सामान्य श्रमिक वर्ग के जीवन की विपन्नताओं और उन पर होने वाले अत्याचारों का बहुत प्रामाणिक चित्रण हुआ है। उस समय के गरीबों के प्रति किसी के मन में सम्मान और सहानुभूति नहीं थी- निर्धन आदर कोई न देई लाख जतन करे औहु चित न धरेई।' किसी भी काल के साहित्य की भाषिक विशेषताओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करना प्रो० अनूप के चिंतन की बहुत बड़ी खूबी है। किसी भी शब्द की उपयुक्तता यानि उसकी अर्थ-परंपरा और ध्वन्यात्मकता की चर्चा पाठक को और भी समृद्ध बनाती है। इस विषय पर अनूप जी के दो शेर देखें- खेलते मिट्टी में बच्चों की हँसी अच्छी लगी, गाँव की बोली, हवा की ताज़गी अच्छी लगी। सभ्यता के इस पतन में नग्नता की होड़ में, एक दुल्हन सी तेरी पोशीदगी अच्छी लगी। प्रो० वशिष्ठ अनूप हिन्दी साहित्य में एक ऐसी जानी-मानी शिखिसयत हैं जो न केवल हिन्दी ग़ज़लकार, गीतकार और आलोचक हैं बल्कि बहुत सुलझे हुए जिंदादिल इंसान भी हैं जो उनके कृतित्व में बार-बार दृष्टिगोचर होता है। आज के समय में नियमित रूप से हिन्दी ग़ज़ल के नये प्रतिमानों की शिनाख्त तथा उनके तई तमाम नये-पुराने रचनाकारों की सर्जना में उपस्थित गुण-दोषों और संभावित सुधारों का कार्य पूरी जिम्मेदारी के साथ करते-निभाते हुए नजर आते हैं। वास्तव में प्रो० वशिष्ठ अनूप एक सच्चे साहित्य-अध्येता के साथ-साथ साहित्य-साधक भी हैं।

संदर्भ:-

- 1). अनूप, वशिष्ठ, हिन्दी साहित्य का अभिनव इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2006 ई.
- 2). अनूप, वशिष्ठ, गीत का आकाश, प्रकाशन केन्द्र, लखनऊ, 2010 ई.
- 3). अनूप, वशिष्ठ, हिन्दी ग़ज़ल की प्रवृत्तिया, उद्भावना प्रकाशन, दिल्ली, 2006 ई.
- 4). अनूप, डॉ० वशिष्ठ, हिन्दी ग़ज़ल का स्वरूप और महत्वपूर्ण हस्ताक्षर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2006 ई.
- 5). अनूप, वशिष्ठ, गर्म रोटी के ऊपर नमक-तेल था, अनन्य प्रकाशन, वाराणसी, 2021 ई.

समाज की रूढ़ी-परम्पराओं, झूठी शान, आडंबरों से परदा उठाती कहानी- 'परदा'

डॉ. प्रमोद पडवळ

सहयोगी प्राध्यापक,

हिंदी विभाग, चांदमल ताराचंद बोरा महाविद्यालय,
शिरूर, जिला-पुणे (महाराष्ट्र) मो. 9767916364

प्रस्तावना- यशपाल हिंदी साहित्य के प्रेमचंदोत्तर युगीन प्रमुख कथाकार है। प्रेमचंद के बाद कथा साहित्य में नए युग का आरंभ करने का श्रेय यशपाल को ही जाता है। क्रांतिकारी विचारों के धनी यशपाल समाज में सामाजिक एवं आर्थिक समानता लाने के पक्षधर थे। साहित्यिक क्षेत्र में कदम रखने से पूर्व यशपाल क्रांतिकारी आंदोलन से जुड़े रहे, जिसका उद्देश्य साम्राज्यवादी, पूंजीवादी व्यवस्था का उन्मूलन और समाजवादी व्यवस्था की प्रतिष्ठापना था। यही वजह है कि यशपाल के समग्र साहित्य में प्रगतिवादी दृष्टि ओतप्रोत दिखाई देती है। दिव्या, देशद्रोही, झूठा सच, दादा कामरेड, अमिता, मनुष्य के रूप, तेरी मेरी उसकी बात जैसे उपन्यास; पिंजरे की उड़ान, तर्क का तुफान, फूलों का कर्ता, धर्म युद्ध, ज्ञान दान आदि जैसे कहानी संग्रहों से इस बात की प्रतीति आती है।

यशपाल की कहानियों में समाज की विभिन्न समस्याओं का बखूबी चित्रण दिखाई देता है। 'परदा' यह यशपाल की एक लोकप्रिय कहानी है जो हिंदी जगत में काफी चर्चा का विषय रही। यह एक प्रतीकात्मक कहानी है, जिसमें उन्होंने हमारे समाज की पोल खोलकर समाज का वास्तविक चेहरा सामने लाने का प्रयास किया है। हमारे समाज में कुछ ऐसे लोग होते हैं, जो गरीब, असहाय, बेबस होते हुए भी ऊपरी तौर पर झूठी शान का नकाब ओढ़ते हैं। अपनी झूठी प्रतिष्ठा को बचाने का प्रयास करते रहते हैं। वास्तविक जीवन की सच्चाई को वे स्वीकार नहीं कर पाते और अपनी झूठी शान बरकरार रखने की जी-तोड़ कोशिश करते हैं। 'परदा' कहानी मनुष्य की इसी प्रवृत्ति की पोल खोलने का प्रयास करती है।

बीज शब्द- प्रगतिशील, नकाब, बेबस, झूठी शान, बाह्याडंबर, सफेदपोश, पाखंड, यथार्थ चित्रण, कालजयी, विरासत, इज्जत, झूठी परंपरा, दाम्भिकता, प्रतीकात्मकता, परदा, बेनकाब आदि।

मुख्य अंश- "यशपाल एक ऐसे रचनाकार है जिन्होंने एक नए शोषण विहीन समाज की रचना के लिए आजीवन रचनात्मक संघर्ष किया। उन्होंने जिस जीवन को जिया, उसके विविध पहलुओं का गहराई से अध्ययन-मनन तो किया ही, उसका रचनात्मक विश्लेषण भी किया। और ऐसा करते हुए उन्होंने साहित्य और कला के सवालियों पर भी अंगुली रखी। स्वभावतः अपनी ऐसी रचनाओं में वे कला के प्रतिगामी मूल्यों का तीखा विरोध करते हैं। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में मनुष्य और साहित्य के सर्वोपरि मूल्यों का ताप मौजूद है।" अपने साहित्य लेखन के इसी दृष्टिकोण के कारण यशपाल का साहित्य जनवादी दृष्टि से लबालब दिखाई देता है।

यशपाल ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की विभिन्न समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। उनकी कहानियों में एक ओर आदर्श के पट से भारतीय जीवन दर्शन का आग्रह है तो दूसरी ओर वास्तविक जीवन संघर्ष से आधुनिकता की चाहत भी नजर आती है। वे सही मायने में समाजवादी विचारधारा के कहानीकार थे। डॉ. सुरेश सिन्हा के अनुसार- "वे यही मानते थे कि जीवन की पूर्णता का यत्न ही कला का उद्देश्य है। वे कला को कला के लिए नहीं मानते।